International Journal of Education and Science Research Review
E- ISSN 2348-6457
Volume-1, Issue-3 June- 2014 P- ISSN2349-1817
WWW.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

भारतीय विदेश नीति : शास्त्री युग

ज्योति
रिसर्च स्कॉलर
राजनीति शास्त्र विभाग,
जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नई दिल्ली

सार
स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित नेहरू जी विदेश मंत्री भी रहे तथा देश के निर्माणात्मक पहलू में अपने व्यक्तित्व की गहरी छाप लगा गये। इसलिए उन्हे ''नीति–निर्माता'' कहा गया। 27 मई 1964 को देश के नीति निर्माता का निधन हो गया। निधन के उपरान्त स्वतंत्र देश के दूसरे प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने 9 जून 1964 को प्रधानमंत्री पद संभाला। इससे पूर्व 27 मई 1964 से 9 जून 1964 तक गुलजारी लाल नन्दा कार्यवाहक रूप से भारत के प्रधानमंत्री रहे।

प्रस्तावना
लाल बहादुर शास्त्रीजी पूर्व प्रधानमंत्री नेहरू की तरह विदेश नीति से परिचित नहीं थें क्योंकि उनकी पृष्ठभूमि एवं परिवेश दोनों भिन्न था। शास्त्री भले ही घरेलू नीति से परिचित वे परन्तु वो विदेश नीति से अपरिचित थे। किन्तु उनका अपने कार्य काल में विदेश नीति के संदर्भ में योगदान सराहनीय रहा है। उनके व्यक्तित्व के प्रभाव ने संस्थागत क्षेत्र में विकास किया। कुछ वर्षों के कार्य काल में लाल बहादुर शास्त्री के विदेश नीति सम्बन्धी निर्णय सुस्पष्ट एंव तर्कशील बन सके। उन्होंने पूर्णकालिन विदेश मंत्री पद की स्थापना की। विदेश मंत्रालय में महासचिव पद को समाप्त कर दिया। विदेश नीति की कार्य प्रणाली में सुधार के लिए पिल्लाई समीति का गठन किया। आर्थिक विभाग को विस्तृत एवं उन्नयन किया। भारतीय विदेश सेवा एवं भारतीय सूचना सेवाओं को मिश्रित कर दिया गया। गुप्तचर सेवा का विकास एवं उन्नयन करके उसमें मंन्त्रिमण्डल की राजनैतिक विषयों की समीति के साथ जोड़ा।

अतः शास्त्री युग में विदेश नीति पर सोच की नयी प्रक्रियाएं, सामूहिक चिन्तन और प्रजातन्त्रिकरण शुरू हुई। अब ससंद ने विदेश नीति निर्माण और उसकी दिशा को निर्धारित करने में अधिक सक्रिय भूमिका निभानी प्रारम्भ की। इस समय स्वर्ण सिंह भारतीय विदेश नीति के मुख्य वार्ताकार बन गये थे।

शास्त्री जी ने 1964 में भारतीय मूल के तमिलों के सम्बन्ध में एक समझौता किया जो नेहरू के समय में नजर अन्दाज होता आया था। इससे भी आगे जाकर भारत ने नेपाल को पूर्ण सम्प्रभु राज्य के रूप में मान्यता प्रदान की। जबकि 1950–51 में नेपाली क्रांति में नेहरू जी की भूमिका अहम् थी। राजा त्रिभुवन को गद्दी से नहीं उतारने दिया था जिसके कारण राजा नेपाल वापिस लौट सके तथा इससे प्रजातंत्र की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया। काफी वक्त तक नेपाल के मंत्री नेहरू की सलाह पर चलते रहे। 1960 में राजा महेन्द्र ने प्रजातन्त्रीय सरकार का तख्ता उल्ट व्यक्तिगत शासन की स्थापना कर ली।

नेपाली कांग्रेस के नेताओं ने भारत को अपनी शरणस्थली बनाकर नेपाल विरोधी आन्दोलनका संचालन करना प्रारम्भ कर दिया। भारत सरकार को चीन की तिब्बत नीति के पश्चात् नेपाल के राजा से समर्थन की उम्मीद को यर्थात् में बदलने एवं राजा को आश्वस्त करने के लिये भारतीय भूमि से नेपाल विरोधी आन्दोलन को बन्द कराने की स्थिति अपनानी पड़ी।

लाल बहादुर शास्त्री केवल एक बार सन् 1963 में नेपाल की यात्रा पर गये थे। सितम्बर 1964 को भारत के विदेश मंत्री सरदार स्वर्ण सिंह की नेपाल यात्रा सम्पन्न हुई उन्होंने भारत–नेपाल मित्रता को आगे बढ़ाया व भारत और नेपाल के बीच एक महत्वपूर्ण समझौता हुआ दिसम्बर 1965 में नेपाल नरेश ने पुनः भारत की यात्रा की।

भारत–पाक सम्बन्धों को देखा जाये तो 11 सितम्बर 1965 को छम्ब के क्षेत्र में पाकिस्तान द्वारा 70 टैकों के साथ भारत पर विशाल आक्रमण किया गया। इस युद्ध से पूर्व भारत–पाक में कच्छ का समझौता हुआ था। शास्त्री जी के नेतृत्व में भारत ने खुलकर युद्ध में भाग लिया और पाकिस्तान को पराजित किया पाकिस्तान ने अन्तर्राष्ट्रीय सीमा पर सैनिक कार्यवाही आरम्भ की, तो सैनिक विशेषज्ञों ने यह मत प्रकट किया कि स्थिति का यही तकाजा है कि विशाल पैमाने पर जवाबी आक्रमण किया जाये। शास्त्री ने बिना किसी हिचकिचाहट के विशेषज्ञों का तर्क स्वीकार कर लिया। इस युद्ध में पाकिस्तान की वायु और टैक शक्ति को तहस–नहस कर दिया गया। जबकि भारत की क्षति अपेक्षाकृत कम हुई।

सुरक्षा परिषद् की ओर से युद्ध बन्द कराने के प्रयत्न आरम्भ किये गये। आखिरकार सयुक्त राष्ट्र संघ के महामंत्री यूथांट के प्रयत्नों के द्वारा सुरक्षा परिषद् में 20 सितम्बर 1965 को एक प्रस्ताव पास किया गया। जिसमें सुरक्षा–परिषद् द्वारा इस बात की मांग की गयी है कि दोनों देश बुद्धवार 22 सितम्बर 1965 को ग्रीनविच समय के अनुसार प्रातः काल सात बजे युद्ध बन्द कर दे तथा बाद में सभी सशस्त्र व्यक्ति 5 अगस्त, 1965 से पूर्व की स्थिति में वापिस चले जाये।

सुरक्षा परिषद् ने सयुक्त राष्ट्र संघ के महामंत्री से यह अनुरोध किया है कि युद्ध विराम तथा सेनाओं की वापसी की देखभाल के लिए आवश्यक सहायता प्रदान की जाये तथा सुरक्षा–परिषद् का दोनों राज्यों से यह अनुरोध है कि वे इस संघर्ष को बढ़ाने के लिए कोई कार्यवाही न करें।

सुरक्षा परिषद् यह निर्णय करती है कि युद्ध–विराम तथा सशस्त्र व्यक्तियों की वापसी के पश्चात् वह उन उपायो पर विचार करेगे, जिनसे संघर्ष के मूल कारण तथा राजनीतिक समस्या का समाधान हो सके तथा सुरक्षा–परिषद् व संयुक्त राष्ट्र संघ के महामंत्री इस प्रस्ताव को क्रियान्वित करने के लिए तथा इस समस्या के शान्तिपूर्ण समाधान करने के हेतु प्रत्येक सम्भव प्रयत्न करे।

ताशकन्द समझौता –

भारत–पाक देशों के मतभेदों को खत्म करने के लिए सोवियत रूस ने बहुत बड़ी भूमिका अदा की। उनके प्रयासों द्वारा भारत के प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खां को वार्ता के लिए ताशकंद में आमन्त्रित किया गया। 4 जनवरी 1966 को प्रसिद्ध ताशकंद सम्मेलन पर भारतीय प्रधानमंत्री एवं पाकिस्तान के राष्ट्रपति द्वारा सहमत होकर हस्ताक्षर किये गये।

भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति इस बात पर समहत हुए कि दोनों पक्ष संयुक्त राष्ट्र घोषणा–पत्र के अनुसार भारत और पाकिस्तान में अच्छे पडोसियों का सम्बन्ध निर्मित हो, वे राष्ट्र संघ के घोषणा पत्र के अनुसार शक्ति प्रयोग का सहारा न लेगे और अपने मामलों विवादों, समस्याओ का समाधान शान्तिपूर्ण ढ़ंग से सुलझायेगे।

दोनों देश के सभी सशस्त्र सैनिक 25 फरवरी 1966 से पहले उस जगह पर वापिस चले जायेगें जहां वे अगस्त 1965 के पूर्व थे और दोनों पक्ष युद्ध विराम की शर्त का पालन करेगें। भारत–पाक के सम्बन्धो में एक–दूसरे के आन्तरिक मामलो, विवादों, समस्याओं में हस्तक्षेप न करने की नीति का पालन करेगें। भारत–पाक एक दूसरे के विरूद्ध होने वाले प्रचार को निरूत्साहित करेगें और दोनों देशों के मध्य मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों की वृद्धि करने वाले प्रचार को प्रोत्साहित करेगें। दोनों देशों के बीच आर्थिक, व्यापारिक सम्बन्धों को दुबारा सामान्य किया जायेगा।

भारत–पाक के मध्य राजनयिक एवं कूटनीतिक सम्बन्ध दुबारा से सामान्य रूप से स्थापित किए जायेगें। दोनों देश युद्ध बन्दियों का प्रत्यपर्ण करेगे व एक दूसरे की कब्जाई हुई सम्पति की वापसी पर पुन– विचार करेगे तथा विभिन्न स्तरों पर मेल–जौल बनाने का प्रयत्न करेंगे।

इस समय में भारत की विदेश नीति का लक्ष्य पड़ोसी राज्यों से अच्छे सम्बन्ध बनाना और आक्रमण से दूर रहकर मुकाबला करना था। जब अप्रैल, 1965 को कच्छ सीमा को लेकर तनाव पैदा हुआ यह भारत को उत्तेजित करने वाली कार्यवाही थी। प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने शान्ति से समस्या का समाधान खोजने के लिए ब्रिटिश मध्यस्थता को स्वीकार कर लिया और समस्या के समाधान के लिए हेग ट्रिब्यूनल

को यह समस्या सौप दी और उसके निर्णय पर अमल किया। सन् 1965 की भारत–पाक युद्ध में विजय ने सन् 1962 के हार के घाव को भरने का काम किया। 1965 में पाकिस्तान के आक्रमण के पश्चात् शास्त्री जी पर चीन की धमकी का भी कोई असर नहीं था क्योंकि भारतीय सेनाओं का लाहौर की तरफ आगे बढ़ना ही जम्मू–कश्मीर को बचा सकता था। इसके पश्चात् उन्होंने सयुक्त राष्ट्र संघ के युद्ध विराम प्रस्ताव को तुरन्त स्वीकार किया और ताशकन्द में शान्ति वार्ता को स्वीकृति दे दी। जिसके कारण 4 जनवरी 1966 को ताशकन्द समझौता हो सका, जिस पर हस्ताक्षर करने के पश्चात् शास्त्री जी का निधन हो गया। यह समझौता काल्पनिक रहा। भारत पाक सम्बन्धों का विश्लेषण करते हुए लिखा है :

''भारत–पाक सम्बन्धों के मध्य समझौता न होने'' का बड़ा व असली कारण पाकिस्तान की विदेश नीति के आधार व प्रकृति थी। पाक का अस्तित्व दो राष्ट्रों के सिद्धान्त से हुआ। जिसे अब पूरी तरह से अस्वीकृत कर दिया गया था। पाकिस्तान दृढ़तापूर्वक कहता गया कि हिन्दु व मुसलमान कभी एक नहीं हो सकते और इसी सिद्धान्त के आधार पर उन्होंने कश्मीर की मांग की, क्योकि कश्मीर में मुसलमान लोगों का बहुमत है। हम कोई मार्ग नहीं जानते जिससे इन गतिरोधो को दूर किया जा सके।

रूस में खुश्चेव के पश्चात् नये नेता कोसीगिन सत्ता में आये। दोनों देशों के नये नेतृत्व ने भारत रूस सम्बन्धों को बनाये रखने की घोषणा की परन्तु स्वाभाविक रूप से रूस की नीति में नये नेता के साथ कुछ परिवर्तन भी हुए। नये नेतृत्व ने एशिया में सन्तुलित सम्बन्ध बनाये रखने का निश्चय किया। फलस्वरूप रूस ने भारत के साथ ही पाकिस्तान के साथ भी सम्बन्ध कायम किए जिससे पाकिस्तान अमरीकी खेमें से निकल आये तथा चीन से नजदीकी न बढ़े। रूस ने पाकिस्तान के साथ सांस्कृतिक, व्यापारिक व औद्योगिक समझौते किए पाकिस्तानी राष्ट्रपति अयुब खान मास्को के दौर पर गये। रूस ने भारत–पाक समस्याओं को सावधानी से प्रभावी किया क्योकि रूस दोनों को ही नाराज नहीं करना चाहता था। उसने आशा व्यक्त की कि दोनों देश आपसी मत भेदों का शान्ति पूर्ण ढ़ग से समाधान करेगें। रूस ने बिगडते भारत पाक सम्बन्धों पर अपनी चिन्ता व्यक्त की। परन्तु ज्यादा कोई निकटता रूसी नेताओं ने नहीं दिखाई। वे अपेक्षाकृत इस समय तटस्थ रहे।

1964 में भारतीय प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री और श्रीलंका की प्रधानमंत्री श्रीमती सिरिमावो भण्डारनायके के मध्य समझौता हुआ। यह समझौता वास्तविक रूप से प्रभावी रहा। इस समझौते के अनुसार श्रीलंका सरकार 3 लाख लोगों को अपने यहां रखने के लिए सहमत थी। जबकि सवा पॉच लाख नागरिकों का दायित्व भारत पर था।

गुट–निरपेक्ष देशों का शिखर सम्मेलन, 1964 में मिश्र की राजधानी काहिरा में सम्पन्न हुआ इसमें 47 तटस्थ तथा 11 पर्यवेक्षक राष्ट्रों ने भाग लिया था। इस सम्मेलन में भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने विश्व शान्ति की स्थापना के लिए पांच सूत्री प्रस्ताव पेश किये थे।

शास्त्री जी ने भारत की विदेश नीति को संस्थागत आधार प्रदान करने का कार्य किया तथा उनके काल में भारत के विदेश विभाग का विस्तार हुआ। उसे अधिक शक्तियां प्रदान की गई तथा प्रधानमंत्री के सचिवालय में शास्त्री जी अधिक समय तक सत्ता में नहीं रह पाये और 10 जनवरी 1966 को शास्त्री जी का निधन हो गया।

शास्त्री कालीन परमाणु विदेश नीति का विस्तार से अध्ययन किया जाना आवश्यक है उनके द्वारा इसके लिए एक निश्चित योजनाबद्ध अध्ययन एवं एक विभाग को होना आवश्यक बताया गया है। इसीलिए 1964 में मन्त्रालय में शोध सैल की स्थापना की गयी।

शास्त्रीकालीन परमाणु नीति

शास्त्री जी नेहरू जी की तरह के बौद्धिक–दार्शनिक रूझान वाले व्यक्ति नहीं थे और न ही उनका विश्व–दर्शन सामान्य निःशस्त्रीकरण के लिए प्रतिबद्ध था। आलोचकों ने शास्त्री जी पर आरोप लगाये कि शास्त्री जी का मानसिक क्षितिज संकुचित था। जबकि वास्तविकता यह है कि शास्त्री जी राश्ट्रहित की मोटी व सामान्य ज्ञान–सुलभ परिभाषा और उस पर आधारित नीति निर्धारण को यथेष्ट मानते थे। भारत की परमाणु नीति के सन्दर्भ में तत्कालीन समाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थितियों को देखते हुए यह प्रभावहीन नहीं बल्कि प्रभावी थी।

एक तरफ तो 1965 में पाकिस्तान के साथ सैनिक मुठभेड़ ने इस बात को सिद्ध किया कि भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा निरापद नहीं समझी जा सकती, वही दूसरी ओर 1964 में चीन द्वारा अणु अस्त्र हासिल कर लेने के बाद उत्तरी सीमा का संकट भी 1962 की तुलना में अधिक बढ़ गया था। कुछ कुटिल विश्लेषकों ने यह टिप्पणी की, कि इस संकट का सामना करने के लिए शास्त्री जी ने पश्चिमी राष्ट्र विशेषकर अमरीका से ''सुरक्षा छतरी'' पाने के लिए अनुरोध किया था, परन्तु आरोप केवल कल्पना थी। भारत की प्रतिरक्षा के बारे में शास्त्री जी नेहरू जी की तुलना में कहीं अधिक वास्तविक, यर्थाथवादी तरीके से सोचते थे। उन्हे भारत की स्वाधीनता के साथ किसी भी प्रकार का समझौता स्वीकार्य नहीं था। दिसम्बर 1965 में शास्त्री जी ने परमाणु ऊर्जा आयोग के अध्यक्ष को यह निर्देश दिया था कि अणु शक्ति के सैनिक उपयोग के लिए तत्काल आवश्यक परियोजनाएं बनायी जाये परन्तु दुर्भाग्यवश इसके एक माह बीतने से पूर्व ही शास्त्री जी की मृत्यु हो गयी। अतः एक बार फिर प्रधानमंत्री स्तर पर सत्ता के हस्तान्तरण का प्रश्न महत्वपूर्ण बन गया और यह वार्ता अधूरी रह गयी।

इसके अतिरिक्त 1966 में एक विमान दुर्घटना में होमी जहांगीर भाभा की मृत्यु से भारत के परमाणु कार्यक्रम की गति रूक गयी अर्थात् धीमी हो गयी। भामा के पश्चात् विक्रम साराभाई ऊर्जा आयोग के अध्यक्ष बने परन्तु उनकी व्यक्तिगत विशेषज्ञता और रूचि अणु ऊर्जा में उतनी नहीं थी। जितनी अंतरिक्ष शोध में। साथ ही विक्रम साराभाई भी अधिक दिनों तक जीवित नहीं रहे। अब परमाणु ऊर्जा आयोग के अध्यक्ष पद का कार्य भरत होमी बसेठना ने सम्भालां। होमी सेठना, डॉ राजा रामन्ना, डॉ पी. के. श्रीनिवासन जैसे वैज्ञानिकों के प्रति पूरे सम्मान का भाव रखते यह सत्य है कि ये उस अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के स्वप्न–दृष्टि वैज्ञानिक नहीं थे। भाभा और साराभाई की तरह ये सलाहाकर भर हो सकते थे, स्वप्न दृष्टी सहयोगी और पथ प्रदर्शक नही। कुछ विद्धानों का मानना है कि भारतीय परमाणु ऊर्जा आयोग का नौकरशाही के चुंगल में फंसना, उसका शुद्ध राजनीतिकरण, वैज्ञानिकों का पारसी और मद्रासी में बटना, तथा इन्जीनियरों, भौतिक–शास्त्रियों की गुटबन्दी आरम्भ हो गई। अतः 1965 से 1974 के बीच भारतीय परमाणु कार्यक्रम की दिशा एंव गति समयानुकुल नहीं साबित हुई।

जहां अणु शक्ति को सामरिक महत्व का माना जाता है। और वह बात स्वयं सिद्ध समझी जाती है कि इसके लिए खर्च की जाने वाली धन राशि के बजट में किसी प्रकार की कटौती नहीं की जा सकती या इसके लेखा परीक्षण की कोई जरूरत नहीं, ऊर्जा–उत्पादन जैसे शान्तिपूर्ण प्रयोगों – परियोजनाओं की खामियों की ओर ध्यान दिलाने वाले व्यक्ति को देशद्रोही या अन्य कोई नकारात्मक नाम दिया गया। इससे सामरिक पर्दे के पीछे अपनी अक्षमताओं – असफलताओ को नजर से दूर करने का अवसर भारतीय परमाणु प्रतिष्ठान को मिल जाता है। नीति के अभाव एवं उसकी दूर्बलता को राष्ट्रहित में गोपनीय रखा जाता है।

धीरेन्द्र शर्मा द्वारा लिखित पुस्तक ''इण्डियन न्यूक्लियर इस्टेट'' में प्रकाश डाला गया है कि भारतीय परमाणु वैज्ञानिको का नकारा गिरोह अपने वैज्ञानिक साम्राज्य के विस्तार के लिए किस तरह प्रभुत्व वाला आचरण करता है। अपने राजनीतिक आर्थिक स्वामियो तथा भारतीय जनता को एक साथ अन्धकार में रखता है। इस प्रकार शास्त्री जी के काल में भारत लगातार बदले हुए अन्तर्राष्ट्रीय मूल्यों और वातावरण के प्रति अपनी सजगता स्पष्ट करता हुआ दृष्टिगोचर होता है। क्षेत्रीय संतुलन और दक्षिण एशिया में अधिक प्रभावशाली भूमिका और उसके लिए व्यापक सहमति उनके काल की महत्वपूर्ण उपलब्धि रही।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 आर. एस. यादव, **भारत की विदेशनीति, एक विश्लेषण**, किताब महल डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2004 पृष्ठ–60
2 बी. एल. फाड़िया, **अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, (सिद्धान्त एव समकालीन राजनीतिक मुदे) 2011** साहित्य भवन, आगरा पृष्ठ संख्या–233
3 दा हिन्दु 4 जनवरी, 1966
4 मोहम्मद **अयूब और के. सुब्रामैयन, दि लिबरेशन बार,** इण्डियन कॉसिल व्लर्ड अफेर्यस, नई दिल्ली, 1972
5 मोहम्मद अयूब, **''इण्डियन, पाकिस्तान एण्ड बांग्लादेश सर्च फोर ए न्यू रिलेशनशीप, इण्डिया कॉनसिल ऑफ व्लर्ड अफेर्यस,''** न्यू दिल्ली–1975